ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 9, September 2016

वैदिक धर्म के मूल तत्व

डॉ. चन्द्र प्रकाश जोशी

व्याख्याता, राजकीय आचार्य संस्कृत महाविद्यालय, अजमेर

सार

जो आदमी सब प्राणियों में एक ही आत्मा को देखता है, उसके लिए किसका मोह, किसका शोक? वैदिक धर्म का मूल तत्व यही है। इस सारे जगत में ईश्वर ही सर्वत्र व्याप्त है। उसी को पाने के लिए, उसी को समझने के लिए हमें मनुष्य का यह जीवन मिला है। ऐतिहासिक वैदिक धर्म (जिसे वैदिकवाद, वेदवाद या प्राचीन हिंदू धर्म के रूप में भी जाना जाता है), और बाद में ब्राह्मणवाद ने उत्तर-पश्चिम भारत (पंजाब और पश्चिमी गंगा) के कुछ भारतीय-आर्य लोगों के बीच धार्मिक विचारों और प्रथाओं का गठन किया। वैदिक काल (1500-500 ईसा पूर्व) के दौरान प्राचीन भारत का मैदान। ये विचार और व्यवहार वैदिक ग्रंथों में पाए जाते हैं, और कुछ वैदिक अनुष्ठान आज भी प्रचलित हैं। यह उन प्रमुख परंपराओं में से एक है, जो हिंदू धर्म को आकार देती हैं, हालांकि वर्तमान हिंदू धर्म ऐतिहासिक वैदिक धर्म से अलग है।वैदिक धर्म का विकास प्रारंभिक वैदिक काल (1500–1100 ईसा पूर्व) के दौरान हुआ था, लेकिन इसकी जड़ें यूरेशियन स्टेपे सिंटश्टा संस्कृति (2200-1800 ईसा पूर्व) और उसके बाद के मध्य एशियाई ऐंड्रोनोवो संस्कृति (2000-900 ईसा पूर्व) और संभवतः सिंधु घाटी की सभ्यता (2600-1900 ईसा पूर्व) में भी हैं।[1] यह मध्य एशियाई भारत-आर्यों के धर्म का एक सम्मिश्रण था, जो खुद "पुराने मध्य एशियाई और नए भारत-यूरोपीय तत्वों का एक समन्वित मिश्रण" था, जिसने "विशिष्ट धार्मिक मान्यताओं और प्रथाओं" से उधार लिया था। बैक्ट्रिया-मैरेजा संस्कृति; और सिंधु घाटी के हड़प्पा संस्कृति के अवशेष।वैदिक काल के दौरान (1100-500 ईसा पूर्व) ब्राह्मणवाद वैदिक धर्म से विकसित हुआ, जो कुरु-पंचला क्षेत्र की विचारधारा के रूप में विकसित हुआ, जो कुरु-पंचम युग के बाद एक व्यापक क्षेत्र में विस्तारित हुआ।

आधुनिक आर्य समाज इसी धार्मिक व्यवस्था पर आधारित हैं। वैदिक संस्कृत में लिखे चार वेद इसकी धार्मिक किताबें हैं। वेदिक मान्यता के अनुसार ऋग्वेद और अन्य वेदों के मन्त्र परमेश्वर अथवा परमात्मा द्वारा ऋषियों को प्रकट किये गए थे। इसलिए वेदों को 'श्रुति' यानि, 'जो सुना गया है' कहा जाता है, जबकि श्रुति ग्रन्थौ के अनुशरण कर वेदज्ञ द्वारा रचा गया वेदांगादि सूत्र ग्रन्थ स्मृति कहलाता है। जिसके नीब पर वैदिक सनातन धर्म और वैदिक आर्यसमाजी आदि सभी का व्यवहार का आधार रहा है। कहा जाता है। वेदों को 'अपौरुषय' यानि 'जीवपुरुषकृत नहीं' भी कहा जाता है, जिसका तात्पर्य है कि उनकी कृति दिव्य है, अतः श्रुति मानवसम्बद्ध दोष मुक्त है। "प्राचीन वैदिक सनातन वर्णाश्रम धर्म" का सारा धार्मिक व्यवहार विभन्न वेद शाखा सम्बद्ध कल्पसूत्र, श्रौतसूत्र, गृह्यसूत्र, धर्मसूत्र आदि ग्रन्थौं के आधार में चलता है। इसके अलावा अर्वाचीन वैदिक (आर्य समाज) केवल वेदों के संहिताखण्ड को ही वेद स्वीकारते है।वैदिक धर्म और सभ्यता की जड़ में सन्सार के सभी सभ्यता किसी न किसी रूपमे दिखाई देता है। आदिम हिन्द-अवेस्ता धर्म और उस से भी प्राचीन आदिम हिन्द-यूरोपीय धर्म तक पहुँचती हैं, जिनके कारण वैदिक धर्म यूरोप, मध्य एशिया/ईरान के प्राचीन धर्मों में भी किसी-न-किसी रूप में मान्य थे, जैसे यजञमे जिनका आदर कीया जाता है उन शिव(रुद्र) या बुद्ध और पार्वती । इसी तरह बहुत से वैदिकशब्दों के प्रभाव सजातीय शब्द अवेस्ताधर्म और प्राचीन यूरोप धर्मों में पाए जाते हैं, जैसे कि सोम (फ़ारसी: होम), यज्ञ (फ़ारसी: यस्न), पितर- फादर,मातर-मादर,भ्रातर-ब्रदर स्वासार-स्विष्टर नक्त-नाइट् इत्यादि

परिचय

वैदिक धर्म में आत्मा की एकता पर सबसे अधिक जोर दिया गया है। जो आदमी इस तत्व को समझ लेगा, वह किससे प्रेम नहीं करेगा? जो आदमी यह समझ जाएगा कि 'घट-घट में तोरा साँईं रमत हैं!' वह किस पर नाराज होगा? किसे मारेगा? किसे पीटेगा? किसे सताएगा? किसे गाली देगा? किसके साथ बुरा व्यवहार करेगा? वेदों में हमें बहुत से प्राकृति की स्तुति और प्रार्थना के मंत्र मिलते हैं। इंद्रियों का संयम। किसी भी लक्ष्य को पाने के लिए तप करना ही पड़ता है। धर्म को पाने के लिए भी तप करना जरूरी है। [1,2]

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 9, September 2016

ब्रह्मचर्य-जीवन में जिस तरह तपस्या करनी पड़ती है, उसी तरह आगे भी। ब्रह्मयज्ञ का अर्थ है गुरुमुख से अनुवचन किया हुआ वेद-श्रुति (मन्त्रब्राह्मणात्मक) वेद भाग को नित्य विधिवत् पाठ करना। पाठ में असमर्थ से वैदिक मंत्रों का जप करना भी अनुकल्प विधि से ब्रह्मयज्ञ ही है। ब्राह्मण वेदों के जिस यज्ञ-अनुष्ठान का प्रसंग वाला भाग नित्य पाठ करता है उसी यज्ञ का फल प्राप्त करता है। प्राचीन काल में जिसने वेदानुवचन किया है वह प्रतिदिन शुक्ल पक्ष में मन्त्रब्राह्मणात्मक वेदभाग और कृष्ण पक्ष में वेदांग-कल्प, व्याकरण, निरुक्त, शिक्षा, छन्द और ज्योतिष पाठ करता था। प्रार्थना और यज्ञ से सम्बन्ध रखने वाला यजमान और पुरोहित- ऋत्विक् वा आचार्य सदाचारी (वेदोक्त वर्णाश्रमधर्मका पालक) होना चाहिए नहीं तो उसकी पूजा-प्रार्थना वा यज्ञ का कोई अर्थ नहीं है। पुराण मे कहा भी है- आचारहीनं न पुनन्ति वेदाः यद्यप्यधीता सहषड्भिरंगैः सदाचारी लोग ही तरते हैं, दुराचारी नहीं।[3,4]

ऋग्वेद में कहा है :-

ऋतस्य पन्थां न तरन्ति दुष्कृतः।

संसार में अनेक मत मतान्तर प्रचलित हैं। सभी अपने आप को मत, पन्थ आदि न कह कर ''धर्म'' कहते हैं। क्या यह सभी धर्म हैं? यदि ये सभी धर्म होते तो इनकी सभी मान्यतायें, सिद्धान्त व परम्परायें एक समान होती व सत्य होती। जल का जो धर्म है वह उसका तरल होना, मनुष्य की प्यास बुझाना, हाइड्रोजन तथा आक्सीजन के संयोग से बनना, गर्मी के सम्पर्क में आकर गरम होना व जमने पर ठण्डा होना आदि हैं। जल के यह धर्म संसार में सर्वत्र एक समान हैं तो फिर मनुष्यों के जो धर्म हैं वह भी एक विषय में तो एक समान होने ही चाहियें। अब यदि उनमें अन्तर व विरोधाभास है तो इसका अर्थ है कि सभी मत–पन्थों की सभी मान्यतायें व सिद्धान्त सत्य नहीं हैं। यदि ऐसा है तो सभी मतों को अपनी–अपनी स्वयं ही समीक्षा करनी चाहिये और सत्य का ग्रहण तथा असत्य का त्याग करना चाहिये। परन्तु देखा यह जा रहा है कि कोई मत अपनी असत्य व मनुष्यता के लिये हानिकारक बातों को छोड़ने के लिये तैयार नहीं हैं। ऐसे भी मत हैं जो येन केन प्रकारेण उचित व अनुचित तरीकों से अपनी जनसंख्या बढ़ा कर देश की सत्ता को अपने मत के अधीन लाना चाहते हैं। दूसरी ओर हमारे ही देश में हमारे पौराणिक मत को मानने वाले बन्धु अन्य मतों के सभी खतरों से अपरिचित दीखते हैं तथा अपनी प्राचीन धार्मिक व सांस्कृतिक विरासत को सुरक्षित रखने के लिये कोई विशेष पुरुषार्थ करते हुए नहीं दीखते।
वैदिक मत वेद से अस्तित्व में आया है। वेद चार हैं जिनके नाम ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्वेद हैं। यह चार वेद सृष्टि के आरम्भ में, अब से 1.96 अरब वर्ष पूर्व, अस्तित्व में आये। वेदों का ज्ञान इस सृष्टि के रचयिता सच्चिदानन्दस्वरूप, सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान तथा सृष्टिकर्ता ईश्वर ने सृष्टि की आदि में अमैथुनी सृष्टि में उत्पन्न चार ऋषि अग्नि, वायु, आदित्य तथा अंगिरा को दिया था। ईश्वर सर्वव्यापक है और इस कारण मनुष्य की जीवात्मा के भीतर भी विद्यमान है।[5,6]

Copyright to IJIRSET

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 9, September 2016

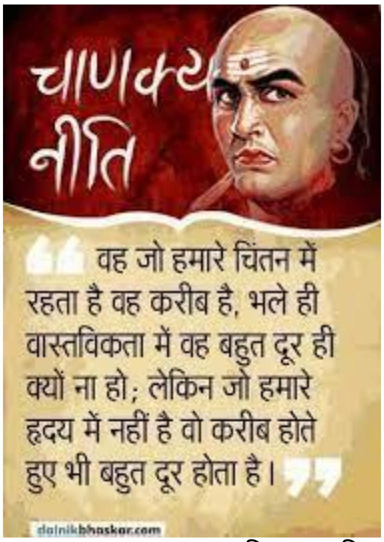

वह आत्मा में प्रेरणा करके ज्ञान देता है। जिस मनुष्य का आत्मा व मन जितना अधिक स्वच्छ व पवित्र होता है, वह उतना ही अधिक ईश्वर के ज्ञान व प्रेरणा को ग्रहण कर सकता है। आदि चार ऋषियों की आत्मा, मन, बुद्धि, हृदय तथा ज्ञानेन्द्रियां सभी वर्तमान मनुष्यों की तुलना में अधिकतम पवित्र थे, इस लिये उन्हें ही ईश्वर ने वेदों का ज्ञान दिया था। ईश्वर इस संसार का रचयिता है। वह सर्वज्ञ व सर्वव्यापक है अतः उसे सृष्टि का ठीक-ठीक ज्ञान है। यदि उसके ज्ञान में किंचित भी न्यूनता होती तो वह मनुष्यों को वेदों का सर्वांगपूर्ण सत्य ज्ञान न दे पाता। ईश्वर के साक्षात्कार कर्त्ता एवं वेदों के रहस्य के भी साक्षात्कार कर्ता ऋषि दयानन्द ने वेद एवं संसार की प्रायः सभी पुस्तकों का अध्ययन कर घोषणा की है कि 'वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।' यह बात ऋषि दयानन्द के वेद भाष्य एवं इतर ग्रन्थों को पढ़ने पर सत्य सिद्ध होती है। ऋषि दयानन्द (1825-1883) ऐसे विद्वान व ऋषि हुए हैं जिन्होंने अपनी मान्यताओं की परीक्षा के लिये सभी मतों के आचार्यों के शंका समाधान व शास्त्रार्थ का स्वागत किया। उन्होंने अपने जीवन में प्रायः सभी मतों के आचार्यों से शास्त्रार्थ व शंका-समाधान सहित वैदिक धर्म के सिद्धान्तों पर वार्तालाप किये और सभी को सन्तुष्ट किया। सभी मतों के आचार्यों से शास्त्रार्थ में उनका पक्ष ही सत्य सिद्ध हुआ।

वेदों का ज्ञान प्राप्त होने पर ऋषियों ने वेदाध्ययन व वेद प्रचार की परम्परा को आरम्भ किया। सृष्टि के आरम्भ में प्रचलित यह परम्परा ही महाभारत काल तक तथा उसके बाद ऋषि दयानन्द तक व अब गुरुकुलों के माध्यम से चल रही हैं। वेद की सभी मान्यतायें संसार के सभी मनुष्यों के लिये हितकारी हैं। इससे किसी मनुष्य के प्रति पक्षपात व अन्याय नहीं होता। सभी शारीरिक, बौद्धिक, आत्मिक व सामाजिक क्षमता के अनुसार अपनी-अपनी उन्नति कर सकते हैं। वेदों में न अन्धविश्वास हैं न कुरीति व मिथ्या परम्परायें। वेदों का ज्ञान पूर्ण तर्क संगत, सत्य एवं प्राणीमात्र के लिये हितकारी है। वेदों के सत्य सिद्धान्तों पर भी एक दृष्टि डाल लेते हैं जिससे वेद सर्वश्रेष्ठ सिद्ध हो जाते हैं और वेदों से प्रचलित मनुष्य के सभी धर्म व कर्तव्य भी सर्वश्रेष्ठ सिद्ध होते हैं।[7,8]

वेदों के अध्ययन से ईश्वर के सत्यस्वरूप सहित जीवात्मा और सृष्टि का अनादि कारण प्रकृति का ज्ञान भी उपलब्ध होता है। ईश्वर, जीवात्मा और प्रकृति ही संसार के मूल अनादि तत्व व पदार्थ हैं। ईश्वर व जीवात्मा चेतन तत्व हैं तथा प्रकृति सूक्ष्म व जड़ पदार्थ है। विज्ञान जिस परमाणु को मानता है वह प्रकृति से बने हैं। प्रकृति परमाणुओं से भी पूर्व की अवस्था है। इन परमाणुओं की रचना ईश्वर ने ही की है। परमात्मा सर्वव्यापक, सर्वातिसूक्ष्म तथा प्रकृति के भीतर भी व्यापक है। इस कारण वह परमाणु एवं सृष्टि की रचना कर सकता है व उसने की भी है। यह भी कह सकते हैं कि मूल प्रकृति से ही परमाणु व कार्य जगत बना है। संसार में तीन पदार्थों ईश्वर, जीव तथा प्रकृति के अनादि अस्तित्व को त्रैतवाद का सिद्धान्त कहा जाता है। ईश्वर ने सृष्टि की रचना क्यों की? इसका उत्तर है कि ईश्वर ने अपने ज्ञान व सृष्टि रचना की सामर्थ्य को जीवों के कल्याण के लिये प्रकट किया है। यदि ईश्वर सृष्टि की रचना न करता तो कौन कहता कि ईश्वर सृष्टि रचयिता है व वह सृष्टि की रचना कर सकता है। ईश्वर ने सृष्टि की रचना इस लिये की है कि सृष्टि में विद्यमान, मनुष्य की दृष्टि में, अनन्त जीवों को उनके पूर्व जन्मों के शुभ व अशुभ कर्मों का फल प्राप्त करा सके।[9,10]

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 9, September 2016

संसार के सर्वाधिक प्रचलित मतों को इस जन्म-मृत्यु व पुनर्जन्म के रहस्य व सिद्धान्त का ज्ञान नहीं है। वेद जीवात्मा के पुनर्जन्म के सिद्धान्त को मानते हैं। पुनर्जन्म का कारण जीवात्मा के शुभ व अशुभ कर्म तथा उनका सुख व दुःख रूपी फल व भोग होता है। पुनर्जन्म का सिद्धान्त ज्ञान, तर्क व अनेक आधारों पर सत्य सिद्ध होता है। संसार के अनेक मत अज्ञानतावश पुनर्जन्म के सत्य सिद्धान्तों को न जानते हैं और न मानते हैं। पं. लेखराम जी ने उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में पुनर्जन्म पर एक पुस्तक लिखी थी जिसमें उन्होंने पुनर्जन्म विषयक सभी प्रश्नों को सम्मिलित कर उनका तर्कपूर्ण उत्तर दिया है। वैदिक धर्मियों के परिवारों में जब सन्तान जन्म लेती है तो उसका जातकर्म संस्कार होता है। इस संस्कार में ईश्वर के दिये वेदमन्त्र बोले जाते हैं। बच्चों को ओ३म् नाम सुनाया जाता है। उसे यह भी बताया जाता है कि तू वेद अर्थात् ज्ञान व कर्म की शक्ति से युक्त है और तुझे वेद व सांसारिक ज्ञान प्रापत कर ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना, यज्ञ, पुरुषार्थ, परोपकार तथा दान आदि करके एवं अपने मन को संयम में रखकर मोक्ष को प्राप्त करना है। मोक्ष का सिद्धान्त जैसा वेद व वैदिक साहित्य में है, किसी मत व मतान्तर में नहीं है। इस सिद्धान्त से अन्य मतों की अनभिज्ञता का कारण हमें उनकी अज्ञानता प्रतीत होता है। वैदिक धर्म में मनुष्य की मृत्यु होने पर उसका दाहकर्म व अन्त्येष्टि कर्म किया जाता है। अन्य मतों में प्रायः ऐसा नहीं होता। वहां मृतक शरीर को भूमि में गाड़ने का विधान है। इसका कारण उन्हें जीवात्मा और शरीर का ठीक-ठीक ज्ञान न होना है। आत्मा के शरीर से निकलने के बाद जड़ शरीर बचता है। यह शरीर पंच तत्वों से मिलकर बना हुआ होता है। अतः इसे अग्नि में जलाकर पंच-तत्वों में विलीन करना होता है। शरीर में हमें जो सुख दुःख होता है वह हमारी आत्मा को होता है। आत्मा के निकल जाने पर शरीर को जलाने से उसे किंचित भी कष्ट या दुःख नहीं होता। अतः सभी को मृत्यु होने पर उसका दाह कर्म ही करना चाहिये जिससे भूमि प्रदुषित होने से बच सके अन्यथा आने वाले समय में कृषि के भूमि शेष नहीं रहेगी।[11,12]

अवलोकन

वैदिक धर्म में गर्भाधान से अन्त्येष्टि पर्यन्त सोलह संस्कार करने का विधान है। इन संस्कारों को करने का कारण व उसकी विधि तथा उसमें जिन वेद मन्त्रों का विनियोग वा विधान है, वह अत्युत्तम व श्रेष्ठ है। अन्य मतों में इसका भी अभाव है। वैदिक धर्म की एक विशेषता यह भी है कि यहां नारी को पुरुष से भी अधिक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। मनुस्मृति में लिखा है कि जहां नारियों का सम्मान होता है उस घर व परिवार में देवता अर्थात् श्रेष्ठ मानव निवास करते हैं। अन्य मतों में नारी की ऐसी गौरवपूर्ण स्थिति नहीं है। वैदिक धर्म में सामाजिक व्यवस्था भी श्रेष्ठ है। यह व्यवस्था जन्म पर आधारित न होकर गुण, कर्म व स्वभाव पर आधारित है। देश व समाज में ज्ञान की पूर्ति करने वालों को ब्राह्मण, देश व समाज की रक्षा व न्याय करने वालों को क्षत्रिय, कृषि व वाणिज्य कार्य करने वालों को वैश्य और जो ज्ञान, शारीरिक बल में न्यून तथा उन्नत कृषि व व्यापार आदि नहीं कर सकते उन्हें अन्य तीन वर्णों की सेवा करने के कारण शूद्र व श्रमिक कहा जाता है। वैदिक काल में यह सब परस्पर सौहार्दपूर्वक रहते थे।[13,14]

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 9, September 2016

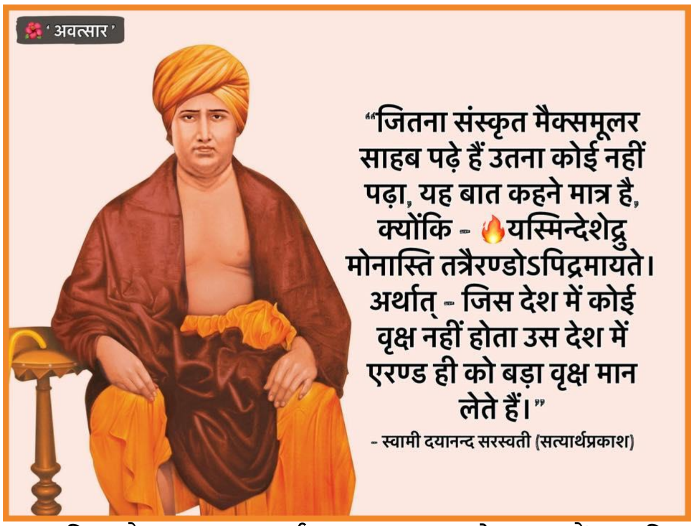

हमारे शरीर में ज्ञान का स्थान शिर है, बल व कर्म का स्थान हमारे बाहू हैं, कृषि व वाणिज्य कर्म का प्रतीक हमारा उदर है तथा सेवा के प्रतीक हमारे पैर हैं। शरीर में जिस प्रकार सभी अंग आपस में प्रेम व एक विचार होकर रहते हैं, इसी प्रकार समाज में भी सभी वर्णों को संगठित एवं प्रेम पूर्वक रहना चाहिये। मध्यकाल में इस व्यवस्था मे विकार आने से यह अपनी महत्ता खो बैठी। आज भी विश्व, देश व समाज में ज्ञानी को प्रथम स्थान, बलवान व बुद्धिमान को द्वितीय तथा कृषक व्यापारी को तृतीय स्थान प्राप्त है। यह भी वैदिक वर्णव्यवस्था का एक क्रियात्मक व उत्तम रूप ही है।वैदिक धर्म में एक पत्नी व एक पति का सिद्धान्त है। इसी को आदर्श गृहस्थी माना जाता है और यह है भी। वैदिक धर्म में तलाक जैसी कुप्रथा भी नहीं है। यहां एक बार विवाह हो गया तो उनका सम्बन्ध मृत्यु होने पर ही छूटता है। अन्य मतों के सम्पर्क में आने पर इसमें भी कुछ बुराईयां आ गई हैं। वैदिक धर्म मनुष्य को सत्य पर आधारित सत्याचरण व शुभ कर्म करने की प्रेरणा देता है। वेदों में यज्ञ का भी विधान है जिससे वायु व जल प्रदुषण दूर होने के साथ मनुष्य आजीवन निरोग वा स्वस्थ रहता है। यज्ञ से दूसरे प्राणियों को भी लाभ होता है जिसका पुण्य यज्ञ करने वाले को होता है और इसका सुखद परिणाम ईश्वर से जीव को प्राप्त होता है। अन्य मतों में ऐसे विधान नहीं है। इन सब श्रेष्ठ विधानों व सिद्धान्तों के होने से वैदिक धर्म सर्वश्रेष्ठ सिद्ध होता है। हम आह्वान करते हैं कि बुद्धिमान लोगों को वैदिक धर्म की शरण में आकर अपने जन्म व जीवन को श्रेष्ठ बनाना चाहिये। सच्चा वैदिक धर्मी इस जन्म में भी सुख पाता है और मरने के बाद भी उसकी उन्नति होकर उसे मोक्ष प्राप्त होता है। आईये, वेदों का अध्ययन करें तथा पृथिवी के श्रेष्ठ वैदिक धर्म को अपनायें। इसी में मनुष्यमात्र का कल्याण है।[15,16]

विचार – विमर्श

इस लेख में हम वैदिक धर्म के मूल तत्वों को जानेंगे, जो कि सम्पूर्ण मानवजाति के लिए एकमात्र धर्म है | कृपया ध्यान दें कि वेद उस समय के हैं जब इस पृथ्वी पर एक ही पंथ, जाति और धर्म था – मनुष्यता |वैसे तो वेद बहुत विविध और गहन विषयों को समाहित करते हैं जो मनुष्य जीवन को उच्चतम सोपान तक लेकर जाने के लिए अति आवश्यक हैं लेकिन हम यहां यह देखेंगे कि वेदों का अनुसरण करने या मानने का क्या अर्थ है ?
आपकी अपनी विचारधारा, समझ या ज्ञान कुछ भी हो पर अगर आप यहां बताये तत्वों का अनुसरण करते हैं तो आप वैदिक विचारधारा का अनुसरण करने वाले कहे जायेंगे | भले ही कोई किसी भी विधि-विधान या किसी परम्परा या किसी भी प्रचलित रीति-नीति को मानता हो, पर

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 9, September 2016

इन तत्वों को मानने और पालन करने वाला हो तो वेदों का
अनुयायी ही कहा जाएगा |और यही वह धर्म है – अग्निवीर
जिसका समर्थक है, सत्य और आनंद प्राप्ति
का यही अकेला रास्ता है |
बहुत से दूसरे पंथ और सम्प्रदायों में भी
इन्हीं में से कई बातें मिलेंगी क्योंकि
हर अच्छाई का मूल स्रोत तो वेद ही हैं | इसलिए
अन्य मतों में भी जो कुछ अच्छा है वह वेदों से
ही आया है | अत: कोई अच्छे कामों को अपनाता
है तो वह वैदिक धर्मी है | और
इसीलिए हमें अपने जीवन में से
अनावश्यक बातें जो अवैदिक हैं उन्हें हटाना चाहिए |
आइए, संक्षेप में वैदिक धर्म के तत्वों को देखें –ऋग्वेद का अंतिम सूक्त (१०.१९१) मनुष्यों को वेदों
की शिक्षाओं को आत्मसात करने के लिए क्या करना
चाहिए यह बताता है | यह सूक्त मनुष्य जीवन
के विविध आयामों की – उद्देश्यों में, अभिगमों में और
अपनाये हुए विधि – विधानों में एक सूत्रता उजागर करता है |
ऋग्वेद १०.१९१.२
तुम सब अन्याय और पक्षपात के बिना सहनशीलता
के साथ सत्य के मार्ग पर चलो | विद्या, ज्ञान और स्नेह को
बढ़ाने के लिए घृणा और विद्वेष से रहित आपस में संवाद करो |
ज्ञान और आनंद को बढ़ाने के लिए साथ मिलकर काम करो | जैसे
श्रेष्ठ लोग सत्य और पक्षपात रहित आचरण करते हैं वैसे ही तुम लोग करो |
ऋग्वेद १०.१९१.३
तुम्हारा सत्य और असत्य का विवेचन पक्षपात रहित हो,
किसी एक ही समुदाय के लिए न हो |
तुम संगठित होकर स्वास्थ्य, विद्या और समृद्धि को बढ़ाने में
सभी क़ी मदद करो | तुम्हारे मन विरोध
रहित हों और सभी की प्रसन्नता
और उन्नति में तुम अपनी स्वयं की
प्रसन्नता और उन्नति समझो | सच्चे सुख़ की
बढती के लिए तुम पुरुषार्थ करो | तुम सब मिलकर
सत्य की खोज करो और असत्य को मिटाओ |
ऋग्वेद १०.१९१.४
तुम्हारा उत्साह से पूर्ण पुरुषार्थ सभी के सुख़ के
लिए हो | तुम्हारे मन अर्थात् सभी भावनाएं प्रेम[17,18]
सहित और विरोध रहित हों | सभी से वैसा
ही प्रेम करो जैसा कि तुम अपने आप से करते हो
| तुम्हारी इच्छाएं, संकल्प, विश्लेषण, श्रद्धा,
संयम, धर्म, जिज्ञासा, ध्यान और अनुकूलता आदि सब केवल
सत्य और सभी के कल्याण के लिए हो तथा
असत्य से परे हो | सुख़ और विद्या की
बढ़ोतरी के लिए तुम सब मिलकर काम करो |
यजुर्वेद १९.७७
हे मनुष्यों ! तुम सदा ही जो कुछ भी असत्य पाओ उस में श्रद्धा मत रखो और जो कुछ विश्लेषण,

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 9, September 2016

तर्क, तथ्य और प्रमाण आदि से सत्य जानो, उसे श्रद्धा
पूर्वक अपनाओ |
यजुर्वेद ३६.१८
मनुष्य कभी किसी प्राणी से वैर भाव न रखे और एक- दूसरे के साथ प्रेमभाव से रहे |
मनुष्य सभी प्राणियों को अपना मित्र समझे और
प्रत्येक की सुख़ -समृद्धि के लिए कार्य करे |
यजुर्वेद १.५
सभी मनुष्यों को दृढ़ता से सिर्फ़ सत्य का
स्वीकार और असत्य का त्याग करना चाहिए |
ईश्वर से प्रार्थना में भी सत्य को अपनाने
की और असत्य को छुड़ाने की प्रार्थना
करनी चाहिए |
यजुर्वेद १९.३०
मनुष्य जब सत्य का पालन दृढ़ता से करता है, तब वह सत्य
और सुख़ का अधिकारी बनता है | इन उत्तम गुणों
से युक्त होने के बाद उसे ज्ञान और संतोष प्राप्त होते हैं |
जिससे सत्य के पालन में उसका विश्वास और दृढ़ हो जाता है और उसकी श्रद्धा बढती
जाती है | जितनी अधिक श्रद्धा बढती जाती है, उतना ही
अधिक ज्ञान और सुख़ मिलते जाते हैं और अंततः इस से
ही परमानंद या मोक्ष मिलता है |[19,20]
अथर्ववेद १२.५.१,२
श्रम अर्थात् परम प्रयत्न और तप अर्थात् लक्ष्य
की प्राप्ति के लिए चुनौतियों और बाधाओं को सहर्ष
सहना, ईश्वर प्रदत्त इन गुणों का त्याग मनुष्य
कभी न करे | श्रम और तप से ही
मनुष्य विश्व के महान रहस्यों को जान सकते हैं – ब्रह्म
या परमेश्वर के ज्ञान को भी पा सकते हैं | मनुष्य श्रम और तप कर के अपनी संपत्ति को बढ़ाए और
राष्ट्र को भी समृद्ध करे | श्रम और तप का ग्रहण कर के सत्य आचरण से मनुष्य उत्तम
कीर्ति को प्राप्त करे |
अथर्ववेद १२.५.३
सभी मनुष्य अपनी वस्तुओं का
ही उपयोग करें अन्यों की न लें |
सभी एक- दूसरे पर पूर्ण विश्वास करें | सत्य के
बिना विश्वास का होना संभव नहीं है अत: सदा
सत्य पर अडिग रहें | मनुष्य को सत्यविद्या, विद्वान और निर्दोषों की रक्षा के लिए पूर्ण प्रयत्न करना चाहिए
| मनुष्य यज्ञ से उत्तम लाभ प्राप्त करे – सभी के लिए हितकारी निः स्वार्थ कार्य, सत्य का ग्रहण
तथा सत्य विद्या का प्रचार – प्रसार | यज्ञ के लिए सदा पुरुषार्थ करते रहो, इस में आलस कभी मत करो |
आइए, अथर्ववेद १२.५.७ – १० के इन मंत्रों में वैदिक धर्म
के सम्पूर्ण तत्वों को संक्षेप में देखें –
ओजश्च – सत्य पालन से युक्त पराक्रम |
तेजश्च – भय रहितता | सहश्च – सुख़-दुःख, हानी –लाभ की परवाह न करते हुए, सत्य का पालन करना |
बलं च- विद्या, ब्रह्मचर्य, अनुशासन और व्यायाम आदि अच्छे नियमों केद्वारा बौद्धिक और शारीरिक क्षमता बढ़ाना |
वाक् च – सत्य और मधुर बोलना | इन्द्रियं च – पांच ज्ञानेन्द्रियां और पांच कर्मेन्द्रियां तथा मन को
पाप कर्मों से रोक कर सदा सत्य और पुरुषार्थ में लगाना |
श्रीश्च – सभी प्रयत्नों से भ्रष्ट,
दुर्बल, स्वाभिमान रहित स्वार्थी शासकों को निकाल

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 9, September 2016

कर सत्य, न्याय और सम्मान पर आधारित शक्ति संपन्न राष्ट्र का निर्माण करना |धर्मश्च – सदा ही सत्य का स्वीकार और असत्य का त्याग करना और इस के द्वारा सभी जीवों का उपकार करना और सभी को आनंद देना |
ब्रह्म च – विद्या और ज्ञान के प्रचार के लियेविद्वन और श्रेष्ट पुरुषों को प्रोत्साहित करना |
क्षत्रं च- राष्ट्र और समाज की रक्षा करने वाले शूर वीरों को बढ़ाना और दुष्टों को दण्ड देना |
विश्श्च – अपने राष्ट्र के व्यापार- वाणिज्य को वैश्विक स्तर पर फैलाना, जिससे विश्व में अच्छे पदार्थों की बढ़त हो | त्विषिश्च – केवल सत्य और उत्तम गुणों का प्रचार- प्रसार |
यशश्च – उत्तम कामों से विश्व में श्रेष्ट कीर्ति पाना |
वर्चश्च- सभी सत्य विद्याओं से युक्त उत्तम शिक्षा पद्धति की स्थापना करना |
द्रविणं च – मनुष्यों को पूर्वोक्त धर्म द्वारा सदा पुरुषार्थ करते हुए धन – संपत्ति प्राप्त करनी चाहिए, प्राप्त पदार्थों की यथावत रक्षा करनी चाहिए, रक्षित पदार्थों की बढ़ोतरी करनी चाहिए और विद्या तथा सदगुणों के प्रचार में धन – संपत्ति का यथावत उपयोग करना चाहिए | आयुश्च – सभी अच्छे नियमों के पालन से स्वास्थ्य और आयु को बढ़ाना | रूपं च – शुद्ध वस्त्रों के धारण से शरीर के स्वरुप को अच्छा रखना | नाम च -उत्तम कर्मों के आचरण से नाम की प्रसिद्धि करनी चाहिए जिससे मनुष्यों को भी श्रेष्ठ कर्म करने में उत्साह मिले |[21,22]
कीर्तिश्च – सत्य ज्ञान के प्रचारसे यश प्राप्त करना |
प्राणश्चपानश्च – श्वास प्रश्वास के नियंत्रण से स्वास्थ्य और आयु की वृद्धि करना |
चक्षुश्च श्रोत्रं च – ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा सदा सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग करना |
पयश्च रसश्च – दूध, जल, औषध आदि के यथावत सेवन से स्वास्थ्य और आयु की वृद्धि करना |
अन्न चा न्नाद्यं च – वैधक शास्त्रों की रीति से स्वास्थ्यप्रद उत्तम भोजन का सेवन करना |
ऋतं च – केवल सर्वोच्च परमात्मा की उपासना करना |
सत्यं च – मन, वचन और कर्म में समानता रखना |इष्टं च – परम आनंद की प्राप्ति के लिए उपरोक्त श्रेष्ट कर्मों से एक मात्र ईश्वर की ही उपासना करना | पूर्तं च – इष्ट की सिद्धी के लिए उचित कर्म करना |
प्रजा च – आम लोगों और नई पीढ़ी को विद्या और कर्म की सही शिक्षा देना |
पशवश्च – पशुओं की उचित देखभाल करना | इन मंत्रों में प्रयुक्त अनेक चकार (च) का अर्थ है 'और' जो यह संकेत देता है कि सत्य और न्याय को बढ़ाने वाले तथा असत्य और दुःख के नाशक अन्य भी जो गुण हैं, मनुष्य उन को भी अपनाए |
अन्य अनेक वेद मंत्र और वेदों पर आधारित ग्रंथ धर्म विषयक गहन विवेचन प्रस्तुत करते हैं |
धर्म के बारे में विस्तार से उत्तम जानकारी ऐतरेय आरण्यक -७.९,११,१०.८, .१०.६२,६३, मुण्डकोपनिषद ३.१.५,६ आदि में उपलब्ध हैं | पूर्व मीमांसा १.१.२- के अनुसार ईश्वर ने वेदों में मनुष्यों के लिए जिसे करने की आज्ञा दी है, वही ' धर्म' है |(स्वामी दयानंद सरस्वती द्वारा लिखित

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 9, September 2016

' ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका ' के वेदोक्तधर्मविषय में इसे विस्तार से
जानें | वेदों को समझने के लिए ' ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका ' का
अध्ययन अति आवश्यक है |)
वैशेषिक दर्शन धर्म की व्याख्या करते हुए
कहता है कि जिस आचरण से संसार में उत्तम सुख और निः
श्रेयस अर्थात् मोक्ष सुख़ की प्राप्ति
होती है, उसी का नाम धर्म है |
इससे पता चलता है कि सभी मनुष्यों के लिए धर्म
एक ही है, दो नहीं | अत:
सभी को इसी एक सत्य धर्म को
अपनाना चाहिए | जब किसी भी कारणों से मन खिन्न हो जब किसी भी कारणों से मन खिन्न हो और आपका मन आपके कंट्रोल में न आ रहा हो तो यह मंत्र आपको शांति प्रदान करेगा।[23,24]
ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः
पृथ्वी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः ।
वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः
सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॥
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥
असल में ये धुआं उठा हैं
#घर के चूल्हे की आग से.....
वर्ना हमे क्या मतलब #ईशा_मुहम्मद के समाज से.....
क्यों #वेद् और #गीता के #मन्त्र दब गए
#फतवे और #नमाज से.....
#हिन्दू तेरा घर जला हैं तेरे ही घर के #चिराग से....

परिणाम

पूरी भारतीय हिंदू दर्शन परंपरा संप्रदायों में बंटी है और इन संप्रदायों में प्रवाहित होती उपासना पद्धतियां और परंपराएं एक आम भारतीय की जीवन संस्कृृृति को कितना और कैसे प्रभावित करती है, इसे समझना ही संप्रदायों के महत्व को जान लेता होता है-

भारतीय वैदिक परंपरा में संप्रदायों का महत्व बता रहे हैं वरिष्ठ स्तंभकार डॉ. प्रवीण तिवारी- पढ़िए उनका ये महत्वपूर्ण और बेहद गंभीर लेख. संप्रदाय और सांप्रदायिकता के मायने आधुनिक दौर में बहुत बदल चुके हैं। मोटे तौर पर समाज के वो अलग-अलग हिस्से जिनके जीने का, पूजा का नियम तौर तरीका आदि अलग-अलग हों, वे संप्रदाय कहलाते हैं। आधुनिक समय में भारतीय संस्कृति में संप्रदायों की उत्पत्ति को समझना महत्वपूर्ण है।

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 9, September 2016

दरअसल, जिन्हें हम आज धर्म कहते हैं वो संप्रदायों की परंपरा से ही निकले। इस लेख में हम भारत भूमि पर प्रतिष्ठित हुए संप्रदायों की बात करेंगे। उनमें भी वैदिक संप्रदायों की, जो आस्तिक धारा से जुड़े हुए हैं। भारतीय संस्कृति का मूल ही आस्तिकता है निश्चित तौर पर यहां आस्तिकता को फलने-फूलने का सुंदर अवसर मिला।

स्वामी विवेकानंद ने अमेरिका में अपने एक भाषण के दौरान कहा था-
दुनिया को धर्म और अध्यात्म सीखना है तो भारत का रुख करना चाहिए। वे वसुधैव कुंटुबकम को सभी आस्तिक संप्रदायों का मूल कहते थे। आज के सांप्रदायिक संघर्ष के दौर में भारतीय संप्रदायों का महत्व और बढ़ जाता है।
जिन्होंने षड्दर्शनों को माना वे आस्तिक संप्रदाय कहलाए और जिन्होंने ने वेद और दर्शन नही माने वे नास्तिक दर्शन कहलाए। जैसे आजीवक संप्रदाय जो भाग्यवादी था। इसकी प्रमुख मान्यता थी कि सबकुछ पहले से तय है और कर्म की कोई विशेषता नहीं। हालांकि संप्रदाय के मूल तत्व यहीं तक सीमित नहीं थे, लेकिन नास्तिक संप्रदाय के इस दर्शन ने चार्वाक दर्शन और बाद के समय में बौध्द एवं जैन संप्रदायों को भी जन्म दिया। यहां भी वेदों और उपनिषदों से सीमित बातों को अपनी तरह से लिखा गया।[25,26]

हम इन संप्रदायों के विषय में इस लेख में विस्तार से बात नहीं कर रहे हैं। इस लेख का उद्देश्य भारत के प्रमुख आस्तिक संप्रदायों को संक्षेप में रखना है। संप्रदायों के दो भागों में पहला और महत्वपूर्ण भाग है आस्तिक संप्रदाय। दूसरे हिस्से नास्तिक संप्रदाय पर संक्षिप्त टिप्पणी उपर कर दी गई है।

आस्तिक संप्रदाय की धारा
जिन संप्रदायों ने वेदों को प्रमुखता दी वे आस्तिक संप्रदाय कहलाए। पद्म-पुराण में कहा गया है- जिस संप्रदाय में मंत्रों का महत्व नहीं वो किसी काम का नहीं।

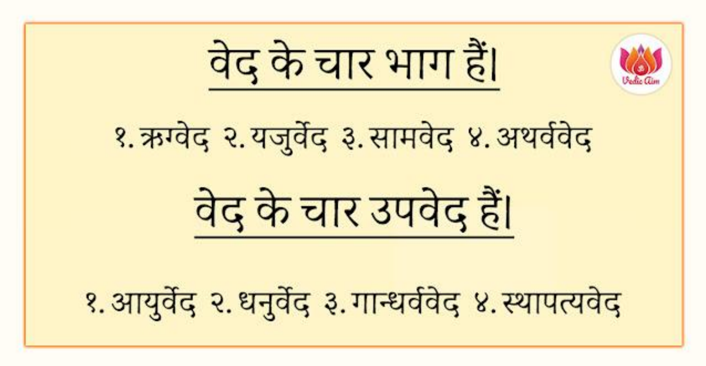

इस बात को समझना जरूरी है कि दरअसल, आज भी मंत्रों या वेदों को समझने और स्वयं को वैदिक कहने में एक बड़ा भेद है। संप्रदायों के गठन के समय स्थितियां ये नहीं थी। मंत्रों और वैदिक ज्ञान को महत्व देने से ही संप्रदाय बने। आधुनिक सोशल सायकोलॉजी ईथनोग्राफी आदि का प्रयोग करती है।इसके अंतर्गत किसी समूह के साथ रहकर उसे समझा जाता है फिर उसके बारे में लिखा जाता है। एक तरीका ये भी है कि उसके बारे में लिखे हुए ग्रंथों के आधार पर साक्ष्य जुटाए जाएं। यदि आस्तिक संप्रदाय की बात करें तो जिन्होंने छः हिंदू दर्शनों को माना और उनका पालन किया वे आस्तिक दर्शन कहलाए।अब उपरोक्त कही बात को स्पष्टता से समझिए। आज यदि कोई स्वयं को किसी भी संप्रदाय का कहता तो वो मात्र प्रतीकों और पूजा पध्दति के आधार पर, जबकि संप्रदायों के प्रारंभिक काल में दीक्षा का महत्व था। मंत्र दीक्षा का मतलब ही था वैदिक मंत्रों की व्यख्या को समझना। आज भी गुरु-शिष्य परंपरा का वही रूप देखने को मिलता है, लेकिन निश्चित तौर पर अब ये प्रतीकात्मक ज्यादा हैं। हांलाकि इसकी मूल उत्पत्ति गुरु-शिष्य परंपरा से ही है।
छह हिंदू दर्शनों को समझाने के लिए एक लेख मैं पहले भी लिख चुका हूं। मेरा निवेदन है उसे भी पढ़ें इससे संप्रदायों के इस गूढ़ विषय को समझने में आपको मदद मिलेगी। यदि संप्रदायों की बात करें तो प्राचीन परंपराओं और ग्रंथों पर अभी तक हुए शोधों के आधार पर छह प्रमुख आस्तिक संप्रदाय हैं-

1. **शैव संप्रदाय**
2. **वैष्णव संप्रदाय**

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 9, September 2016

3. **शाक्त संप्रदाय**
4. **गाणपत्य संप्रदाय**
5. **सूर्य संप्रदाय**
6. **अद्वैत संप्रदाय**

इनमें शैव और वैष्णव संप्रदायों के बारे में हम सभी ने सुन रखा है, लेकिन ये जानकारियां बहुत सीमित हैं। शिव को मानने वाले शैव और विष्णु को मानने वाले वैष्णव। इसी तरह शक्ति की उपासना करने वाले शाक्त और गणपति की उपासना करने वाले गाणपत्य संप्रदाय से संबंधित हुए। इन्हीं के साथ उस संप्रदाय का भी महत्व है, जो सूर्य को ही अपने आदि और अंत के रूप में पूजता था यानी सौर या सूर्य संप्रदाय। आदि शंकराचार्य ने वैदिक परंपरा की पुनर्स्थापना की और अद्वैत दर्शन की बात कही। इसी से अद्वैतवाद की शुरूआत हुई। अद्वैतवाद एक ऐसा संप्रदाय है जिसमें समग्रता है। अब यदि समग्रता में देखा जाए तो वर्तमान हिंदू धर्म में शिव, शक्ति, गणपति, विष्णु, लक्ष्मी और वेदों सभी का समान स्थान है। इसे समझना बहुत महत्वपूर्ण है। हर आस्तिक संप्रदाय का मूलतत्व आत्मा की प्रमुखता ही रहा है। किसी ने शिव को तो किसी ने शक्ति या विष्णु के रूप में इसी परमात्म तत्व को निरूपित किया। इसी तरह संप्रदायों का निर्माण हुआ। वेदों के अलग-अलग हिस्सों का अनुपालन भी इन संप्रदायों में हुआ। यानी जिसे जो जंचा उस हिसाब से पूजा पध्दति और नियम, आचार, व्यवहार आदि बनाए गए। जब भी दो समूहों में मान्यताओं की भिन्नता होती है तो श्रेष्ठता की लड़ाई शुरू हो जाती है। निश्चित तौर पर लंबे समय तक चले इन अलग-अलग संप्रदायों के बीच भी संघर्ष रहा होगा लेकिन मूल तत्व एक ही था, आत्मज्ञान और जगत् कल्याण।[27]

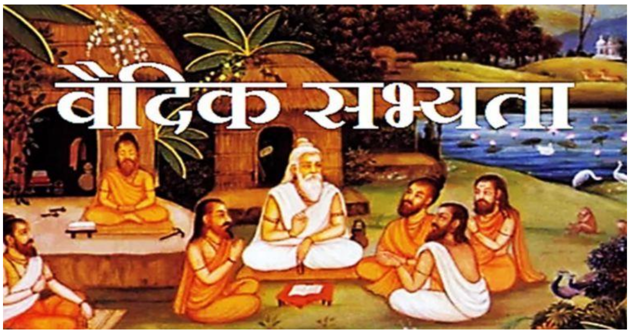

शैव संप्रदाय की धारा और परंपरा
भगवान शिव को मानने वाले शैव कहलाए। इस संप्रदाय में ही कई अन्य संप्रदाय भी बने। उदाहरण के लिए नंदीनाथ संप्रदाय। इसका जोर योग पर रहा और इसे नाथ संप्रदाय से भी जोड़कर देखा जाता है। अब यहां नाथ संप्रदाय का भी नाम आया तो आप सोच रहे होंगे उपरोक्त उल्लेखित संप्रदायों में इसका नाम क्यों नहीं। दरअसल, इन्हीं पांच संप्रदायों से फिर कई अन्य संप्रदायों की उत्पत्ति हुई।

इससे ये बात सिध्द होती है कि एक ही संप्रदाय के विभक्त होते होते कई रूप हो जाते हैं। इसकी वजह किसी व्यक्ति विशेष या जिन्हें हम गुरु कह सकते हैं के आत्मज्ञान के बाद वे पूर्व में प्रतिष्ठित कुछ पध्दतियों और विचारों में परिवर्तन करते हैं। इसी को मानने वाले उनका अनुसरण करते हैं और मूल संप्रदाय से एक नई धारा निकल जाती है। बौध्द और जैन संप्रदाय इसका बड़ा उदाहरण हैं। हालांकि नास्तिकता या वेदों को महत्व नहीं देने की वजह से वे पूरी तरह से अलग संप्रदाय बन गए।

शैव संप्रदाय में नंदीनाथ जी को महत्वपूर्ण माना जाता है, उन्होंने शिव सिध्दांत दिए और फिर उनके कई शिष्यों ने इस परंपरा को आगे बढ़ाया। शिव, लिंग उपासना इनकी प्रमुख पहचान था। लिंगायत, शैव, काल्पलिक आदि संप्रदाय इसी का हिस्सा हैं। वेदों और पुराणों में इसका उल्लेख स्पष्टता से मिलता है। खासतौर पर मत्स्य पुराण में लिंग उपासना का विस्तृत वर्णन है।

वैष्णव संप्रदाय की धारा और दिशा
इधर, जो विष्णु और उनके अवतारों को परमात्म तत्व के रूप में देखते थे उनसे वैष्णव संप्रदाय की शुरूआत हुई। आज भी शिव और विष्णु या कृष्ण के उपासकों के तौर तरीकों में आपको बहुत भेद मिल जाएंगे। उदाहरण के लिए अघोर शास्त्र पर चलने वाले शैव और भगवान विष्णु या कृष्ण की प्रतिमा को सजीव मानकर उन्हें कपड़े पहनाना, सुलाना, खिलाना आदि बहुत से तरीके हैं। इन

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 9, September 2016

सभी नियमों का विकास कालांतर में हुआ होगा।

वर्तमान हिंदू धर्म में इन्हें समग्रता के साथ लिया गया है। यानी सामान्य जन दोनों या सभी संप्रदायों के गुणों को अपने जीवन में ढाल चुके हैं। ये समग्रता सुंदर भी है क्योंकि इसमें किसी तरह का भेद नहीं, हां इन्हें स्पष्टता और गहराई से समझने की आवश्यकता है। इसके भी चार विभाग बाद में हुए। प्रक्रिया वही थी गुरुओं और शिक्षा पध्दति के आधार पर मान्यताओं और पूजा पध्दतियों में कुछ परिवर्तन। यहां भी वेदों की ही प्रमुखता है।

श्री, ब्रह्म, रूद्र और कुमार, चार प्रमुख संप्रदायों में वैष्णव संप्रदाय को बांटा जा सकता है। लक्ष्मी, शिव, ब्रह्मा और सनतकुमारों को इनका मूल स्त्रोत माना जा सकता है। बाद में तुलसीदास या चैतन्य महाप्रभु जैसे वैष्णव भक्तों ने इसी परंपरा को आगे बढ़ाया। रूद्र वैष्णव संप्रदाय ये स्पष्ट करता है कि शिव का भी वैष्णव संप्रदाय में स्थान रहा।
अतः ये कहना गलत होगा कि शिव उपासकों का वैष्णव संप्रदाय में स्थान नहीं है। राम और शिव के भक्ति पूर्ण संबंध को जिस तरह से दिखाया गया वो भी स्पष्ट करता है कि इस भेद को बाद में पूरी तरह समाप्त कर दिया गया।

शाक्त्य या शक्ति संप्रदाय, धारा और प्रवाह

मां भगवती को हम शक्ति के रूप में जानते हैं। श्रुति और स्मृति के आधार पर शक्ति संप्रदाय का महत्वपूर्ण साहित्य आगे बढ़ा। शक्ति संप्रदाय को सिर्फ भगवान शिव की पत्नी माता पार्वती तक सीमित करके नहीं देखा जा सकता। जिन्होंने जगत् को चलायमान रखने वाली ऊर्जा में आस्था की और उसकी उपासना की वो शक्ति संप्रदाय के माने गए। शक्ति संप्रदाय के लिए देवी उपनिषद, शक्ति उपनिषद, देवी महात्म्य का विशेष स्थान है।
वर्तमान में दुर्गा सप्तशति और नवदुर्गा के समय शक्ति उपासना इसी संप्रदाय का रूप है। आज भी बंगाल, असम आदि जगहों पर देवी की ही उपासना का महत्व है। देवी के हर स्वरूप को शक्ति का रूप माना जाता है। लक्ष्मी और सरस्वती भी शक्ति के ही रूप हैं। निश्चित तौर पर देवी के ये स्वरूप प्रतीकात्मक हैं क्योंकि शैव और वैष्णव संप्रदायों के होते हुए भी शक्ति संप्रदाय का होना ये बताता है कि शक्ति के उपासकों ने ऊर्जा या आत्मतत्व को एक स्त्री का रूप माना।कालांतर में सभी देवियों की उपासना ऊर्जा के इसी रूप की उपासना की ओर अग्रसर हुईं। इस संप्रदाय में मंत्रों के साथ-साथ तंत्र का भी विशेष स्थान रहा। जितनी भी तांत्रिक क्रियाएं हुई वो इसी संप्रदाय के अंतर्गत थी। हालांकि शैव संप्रदाय में भी इसका महत्व था खासतौर पर अघोर पंथियों में।कुल मिलाकर संप्रदायों में भेद होने के बावजूद जबरदस्त साम्य है। इसकी वजह है सभी का मूल स्त्रोत एक ही होना, यानी वैदिक आस्तिक परंपरा और श्रुति, स्मृति।खुदाई से मिले साक्ष्यों के आधार पर देवी का अब तक का सबसे प्राचीन पीठ मध्य प्रदेश के सीधी में मिला है, जिसे वैज्ञानिकों ने 8000 से 9000 ई. पूर्व का पाया है। निश्चित तौर पर शक्ति की उपासना इससे भी पहले होती रही होगी। ऋग्वेद के देवी सूक्त को भी इसका मूल माना जाता है जिसका अर्थ है शाश्वत् और अनंत चैतन्य, जो हर प्राणीमात्र में उपस्थित है, वो देवी का ही रूप है। [28]

गाणपत्य संप्रदाय की धारा और दिशा

भगवान गणेश सबसे सुंदर, सबसे प्यारे और प्रथम स्मरणीय माने गए हैं। उनसे ही हर कार्य का शुभारंभ होता है। गाणपत्य संप्रदाय का ये महत्वपूर्ण बिंदु आज भी हिंदू धर्म की महत्वपूर्ण पहचान है। मुद्गल पुराण और गणेश पुराण दो ऐसे ग्रंथ हैं जो पूरी तरह से भगवान गणेश को समर्पित है, लेकिन क्या आप जानते हैं कि उनके 32 रूपों और 8 अवतारों का वर्णन भी इन्हीं पुराणों में मिलता

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 9, September 2016

है। जब इनके बारे में आप पढ़ेंगे तो पाएंगे गूढ़तम दार्शनिक रहस्यों को उनके इन अवतारों में पिरोया गया है।दरअसल, इसमें गणपति की उपासना में, मोह, मद, क्रोध आदि के नाश के लिए उनके अलग-अलग रूप बताए गए, तो वीरता और पालनकर्ता के रूप में भी उनका निरूपण किया गया। महाराष्ट्र में आज भी गणपति जी की पूजा उपासना का विशेष महत्व है। गणेश प्रतिमाओं और गणेश मंदिरों के अवशेषों से भगवान गणेश की पूजा उपासना की प्राचीनता का भी पता चलता है।गणपति संप्रदाय में महागणपति को अपने पिता शिव से ऊपर बताया गया। यहां तक की त्रिपुरासुर से युध्द के समय जब भगवान शिव ने महागणपति का आशीर्वाद नहीं लिया तो उन्हें युध्द में हार दिखाई दी। गलती का एहसास होने पर उन्होंने महागणपति का आशीर्वाद लिया और विजय प्राप्त की।

जाहिर है पौराणिक गाथाओं को समझने की आवश्यकता है। हर संप्रदाय ने अपने महत्व को दिखाया। आज भी ऐसा ही होता है। सभी की भक्ति का केन्द्र सगुण ब्रह्म ही है, बस स्वरूप बदल गए। इनके रूपों के वर्णन में कई महत्वपूर्ण बातों को लिखा गया, जो जीवन के मूल मंत्र हैं। यही संप्रदायों की रूप रेखा है कि कैसे आप जीवन दर्शन को मानते हैं। हिंदू दर्शन इतना विराट है कि जिसे जो जंचा उसने वो लिया और सभी संपूर्ण भी दिखाई देते हैं। पुराणों और उनके तथ्यों पर बहस करने वाले इसके मूल तत्व को समझ ही नहीं पाते।

सौर संप्रदाय की धारा और पथ

सौर संप्रदाय हिंदू धर्म में महत्वपूर्ण स्थान रखता था, लेकिन मुगल आक्रांताओं के आने के बाद 12 या 13 वी शताब्दी में इनकी तादाद बहुत कम हो गई। खासतौर पर वैष्णव और शैव संप्रदायों के समकक्ष तो न के बराबर। नाम से ही स्पष्ट है वे लोग जो सूर्य को सगुण ब्रह्म के रूप में पूजते थे, इस संप्रदाय से संबध्द थे। सूर्य उपासना का हिंदू धर्म में महत्वपूर्ण स्थान है। कोणार्क के सूर्य मंदिर के बारे में आपने सुना ही है।

अमर उजाला के लिए एक चुनाव यात्रा के दौरान मुझे उत्तर प्रदेश के बुंदेलखंड इलाके में भी ऐसा ही एक भव्य मंदिर मिला था, लेकिन अब सिर्फ मंदिर के अवशेष ही बाकी रह गए हैं। महाभारत में युधिष्ठिर की सौर ब्राह्मणों से मुलाकात का उल्लेख भी मिलता है, जिनके साथ उनके 7 हजार शिष्य भी थे।अब सौर संप्रदाय के बहुत ग्रंथ उपलब्ध नहीं है, जानकारियों के मुताबिक नेपाल में अब भी सौर संप्रदाय से जुड़ा एक छोटा ग्रंथ उपलब्ध है। इसके अलावा सूर्य स्तोत्रों, प्रार्थनाओं और प्राचीन कविताओं के आधार पर भी इस संप्रदाय के साक्ष्यों को समझा जा सकता है। सूर्य को त्रिदेवों के मूल स्त्रोत के तौर पर इस संप्रदाय ने पूजा।वे आत्म शक्ति का मूल स्त्रोत सूर्य को ही मानते थे। एक बात को याद रखिए सभी संप्रदाय आत्म तत्व, ऊर्जा या शक्ति की ही बात कर रहे हैं बस उसे पूजने के लिए सांकेतिक रूप से अलग-अलग रूपों का इस्तेमाल कर रहे हैं। निश्चित तौर पर सौर संप्रदाय ने साक्ष्य के तौर पर सामने उपस्थित सूर्य को ही सभी शक्तियों का मूल स्त्रोत, पालक और संहारक माना। इसे आप हिंदू धर्म के वृहद वैज्ञानिक दृष्टिकोण के रूप में भी देख सकते हैं। ऋग्वेद वेद के सूत्रों में भी सूर्य की उपासना अलग-अलग रूपों में की गई है। गायत्री मंत्र की भी इस संप्रदाय की प्रार्थनाओं में प्रमुखता रही। [26]

अद्वैत वाद या संप्रदाय, जो प्रमुख रहा और प्रभावी भी

कितना सुंदर शब्द है, अद्वैत। मोटे तौर पर अर्थ है, कोई दूसरा नहीं, कोई भेद नहीं, सब एक हैं। वेदों की पुनर्स्थापना करने वाले आदि शंकराचार्य का हिंदू दर्शन शास्त्र को वर्तमान समय में पूर्ण अर्थों के साथ रखने में महत्वपूर्ण योगदान रहा। समय के साथ-साथ

मान्यताओं में जड़ता आ जाती है और लोग मूल तत्व को भूल जाते हैं। शंकराचार्य ने वेदों के सार के तौर पर कहा कि जीव ही ब्रह्म है और मुक्ति इसी जीवन में संभव है।

मुक्ति के लिए मृत्यू की प्रतीक्षा नहीं करनी। सरल भाषा में समझने के लिए आदि शंकराचार्य के कार्य को समझिए। उन्होंने कुछ उपनिषदों का भाषा, टीका किया और वैदिक जीवन को सरलीकृत किया। वे जानते थे कि वैदिक संस्कृति मानव कल्याण के लिए है लेकिन इतनी विस्तृत है और इतने संप्रदायों में बंटी है कि मूल तत्व एक होते हुए भी बहुत भेद हो जाते हैं। उन्होंने वैदिक संस्कृति में चल रही कई बातों पर शास्त्रार्थ किए और ये स्थापित करने में सफलता पाई कि जीव ही ब्रह्म है और वैदिक संस्कृति अद्वैत की बात करती है।
इस शिक्षा को आगे भी सुचारू रूप से चलाए रखने के लिए उन्होंने चारों दिशाओं में चार मठों की स्थापना की। उनके शिष्यों ने उनकी शिक्षा और उपनिषदों के भाषा टीका को आगे बढ़ाया। यहीं से सभी संप्रदायों की पूजा पध्दति में उसी सगुण ब्रह्म की उपासना शुरू हुई जो एक ही है और हमसे अलग नहीं।

आदि शंकराचार्य ने विश्व धर्म को अद्वैतवाद के जरिए रखा। ये सही मायनों में मानव का धर्म है। इस धर्म में पुरुषार्थ का महत्व है जहां धर्म, अर्थ, काम से मोक्ष की प्राप्ति होती है।इस गूढ़ विषय पर कई ग्रंथ लिखे जा चुके हैं लेकिन तेजी से बढ़ती दुनिया में अब भौतिकतावाद हावी है। ऐसे में मानव जीवन के मूल तत्व को जानने के लिए हिंदू दर्शन को समझना जरूरी है। अलग-अलग देवी देवताओं की पूजा उपासना को न समझने वालों को इन संप्रदायों को समझना जरूरी है, जो इन्हीं दर्शनों को समझाने के मकसद से उत्पन्न हुए। लक्ष्य एक ही था सगुण ब्रह्म की उपासना। अद्वैतवाद ने सभी को स्वीकार किया और वर्तमान समय में हिंदू धर्म में सभी देवी देवताओं का समान स्थान है। पूजा पध्दतियां भी कमोबेश एक जैसी ही हैं।[25]

निष्कर्ष

वैदिक धर्म संसार का सबसे प्राचीन मत है। सृष्टि के आरम्भ में परमात्मा ने चार ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य तथा अंगिरा को चार वेदों का ज्ञान दिया था। ... वेद सर्वांगीण धर्मग्रन्थ है अर्थात् इसमें मनुष्य के लिए आवश्यक व उपयोगी सभी विषयों का ज्ञान है। वेद का अध्ययन कर मनुष्य का आध्यात्मिक एवं भौतिक सभी प्रकार का विकास होता है। हम वैदिक धर्म क्यों धारण करें? इसका उत्तर यह है कि संसार में जितने मत-मतान्तर हैं वह सब अपूर्ण ज्ञान से युक्त होने के साथ मिथ्या ज्ञान व अन्धविश्वासों से युक्त होने सहित भाषा आदि की दृष्टि से भी वेदों की भाषा के सदृश उन्नत भाषा से युक्त नहीं हैं। वेदों की महत्ता यह है कि यही वास्तव में मनुष्यों का धर्म है जिसे धारण करने से मनुष्य के जीवन का सर्वांगीण विकास होता है। वेदों के आधार पर वेदों के मर्मज्ञ ऋषि दयानन्द ने एक नियम दिया है कि संसार का उपकार करना आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् सबकी शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना। वेदों का अध्ययन कर उसके अनुसार आचरण करने पर मनुष्य की शारीरिक, आत्मिक एवं सामाजिक उन्नति होती

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 9, September 2016

है। यही मनुष्य जीवन का उद्देश्य भी मान सकते हैं। आत्मिक उन्नति से ही मनुष्य के सभी दुःखों की निवृत्ति होकर मोक्ष की उपलब्धि होती है। शारीरिक उन्नति के लिये हमें आहार, निद्रा एवं ब्रह्मचर्य से युक्त जीवन व्यतीत करना होता है। इन नियमों को तोड़ने से मनुष्य का शारीरिक विकास भली प्रकार से नहीं होता। आहार के अन्तर्गत वह सब पदार्थ आते हैं जिनका हम अपने उदर की क्षुधा वा भूख को शान्त करने के लिये भक्षण करते हैं। वेद मनुष्य को अन्न प्राप्ति के लिये कृषि कार्य करने तथा सात्विक अन्न का भक्षण करने की प्रेरणा करते हैं। यदि हमारा अन्न वा भोजन शुद्ध एवं पवित्र नहीं होगा तो हमारे शरीर में विकार उत्पन्न होकर अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न हो सकते हैं। अन्न सहित मनुष्य को देशी गाय का दुग्ध एवं फलों का सेवन भी करना चाहिये। इतना करने से ही मनुष्य अपने शरीर को निरोग, स्वस्थ व बलवान बना सकते हैं। आसन, व्यायाम व प्राणायाम आदि से भी मनुष्य का स्वास्थ्य ठीक रहता है व शरीर के बल की वृद्धि होकर उन्नति होती है। आहार सहित हमें लगभग 6 घंटे की निद्रा लेनी चाहिये। स्वास्थ्य का स्वर्णिम नियम ब्रह्मचर्य का पालन है। इससे मनुष्य ईश्वर को जानकर उसके गुणों को धारण करने में समर्थ होता है। ब्रह्मचर्य का अर्थ इन्द्रियों के संयम से भी लिया जाता है। इसका भी जीवन को बहुत लाभ होता है। हमें अपनी सभी ज्ञानेन्द्रियों तथा कर्म इन्द्रियों को संयम में रखना चाहिये। ऐसा करके हम अपने शरीर को स्वस्थ रखने के साथ सुख का अनुभव व उपभोग करने में समर्थ होते हैं और दीर्घायु होते हैं।वैदिक धर्म अन्य मतों के समान मनुष्यों द्वारा प्रचलित मत वा धर्म नहीं है। वैदिक धर्म का आरम्भ वेदों से हुआ है। यह वेद हमें परमात्मा से प्राप्त हुए हैं। धर्म की आवश्यकता सृष्टि के आरम्भ से ही सभी मनुष्यों को होती है। अतः धर्म का आरम्भ भी सृष्टि के आरम्भ से हो जाता है। मनुष्यों में यह सामर्थ्य नहीं है कि वह किसी भी भाषा के अभाव में एक नई भाषा का आविष्कार कर सकें। जिस प्रकार मनुष्य अपने शरीर के अंगों को नहीं बना सकता व बिना ज्ञान के अस्वस्थ अंगों को ठीक कर सकता, इसके लिये उसे ईश्वर के समान सत्ता से निर्मित शरीर की आवश्यकता होती है। हमारा शरीर बनाने वाली सत्ता परमात्मा है। परमात्मा सृष्टि को बनाता व चलाता है। उसने ही लोक लोकान्तर और इसमें विद्यमान सूर्य, चन्द्र, पृथिवी आदि ग्रह-उपग्रहों एवं नक्षत्रों को बनाया है। वह ईश्वर सर्वज्ञ एवं सर्वज्ञानमय है। उसी से मनुष्य को सबसे पहले ज्ञान प्राप्त होता है। वही ज्ञान वेद है। ज्ञान की दृष्टि से वेद सर्वांगपूर्ण ज्ञान है। ऋषि दयानन्द के शब्दों में वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्यों (मनुष्यों) का परम धर्म है। इस नियम को प्रामाणित करने के लिये ऋषि दयानन्द ने चारों वेदों की भूमिका ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका एवं वेदभाष्य का प्रणयन किया था। वेदों में निहित ज्ञान को सरल शब्दों में समझाने के लिये हमारे वेदज्ञ ऋषियों ने वेदों पर टीकायें आदि कीं और दर्शन तथा उपनिषद आदि ग्रन्थों की रचना भी की। इन सभी ग्रन्थों के आधार पर मनुष्य ईश्वर, जीवात्मा तथा सृष्टि विषयक सम्यक ज्ञान को प्राप्त कर सकता है। वेद एवं ऋषियों के व्याख्या ग्रन्थों उपनिषद, दर्शन, मनुस्मृति, सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका आदि की उपस्थिति में मनुष्य को धर्म पालन के लिये किसी अन्य ग्रन्थ की आवश्यकता नहीं है। किसी ग्रन्थ व मत की पुस्तक में ऐसी कोई प्रशंसनीय बात नहीं है जो वेद में पहले से न हो। अतः वेदेतर ग्रन्थ वेदों के पूरक होने से ही मान्य होते हैं और उनमें जहां जो वेद विरुद्ध कथन व वचन हैं वह स्वीकार करने योग्य नहीं होते। इस दृष्टि से मत व पन्थ के ग्रन्थों की परीक्षा करने पर सब में वेद विरुद्ध व सृष्टि क्रम के विरुद्ध अनेक कथन व वचन मिलते हैं जिनसे उनका मिथ्यात्व सिद्ध होता है। वेद ही सभी मनुष्यों के लिये ग्रहण वा धारण करने योग्य सिद्ध होते हैं। सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ लिखकर ऋषि दयानन्द ने इसी बात को हमारे सम्मुख रखा है। हमारा कर्तव्य वेद और सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थों का प्रचार कर सत्य को मनवाना और असत्य को छुड़वाना है। ऐसा करेंगे तभी वेद विश्व धर्म बन सकता है।[28]

संदर्भ

1. "'The Old Vedic language had its origin outside the subcontinent. But not Sanskrit.'".
2. ↑ WD. "वैदिक धर्म क्या कहता है | Vedic religion". hindi.webdunia.com. मूल से 29 जुलाई 2011को पुरालेखित.
3. "कल्प विग्रह।". मूल से 20 अप्रैल 2010 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 14 मार्च 2010.
4. ↑ Witzel 1989.
5. ↑ "संग्रहीत प्रति". मूल से 22 जुलाई 2015 को पुरालेखित.
6. ↑ "संग्रहीत प्रति". मूल से 19 सितंबर 2015 को पुरालेखित.
7. ↑ ऋग्वैदिक आर्यों का जीवन।
8. ↑ "पाठ-1 वेद का परिचय एवं महत्त्व". स्कूल ऑफ़ ओपन लर्निंग. दिल्ली विश्वविद्यालय. |accessdate= में तिथि प्राचल का मान जाँचें (मदद)
9. ↑ "पाठ-4 वेदांग-साहित्य". स्कूल ऑफ़ ओपन लर्निंग. दिल्ली विश्वविद्यालय. मूल से 15 मई 2010 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि २५ जून, २०१७. |accessdate= में तिथि प्राचल का मान जाँचें (मदद)
10. गीता २.५३ - श्रुति विप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्चला। समाधावचला बुद्धिस्तदा योगमवाप्स्यसि॥ - यानि (हे अर्जुन) यदि तुम्हारा मन श्रुति में घुसकर भी शांत रहे, समाधि में बुद्धि अविचल रहे तभी तुम्हें सच्चा दिव्य योग मिला है।
11. ↑ आर्यों का आदिदेश

12. ↑ शतपथ ब्राह्मण के अनुसार - 'अग्नेर्वाऋग्वेदो जायते वायोर्यजुर्वेदः सूर्यात् सामवेदः, यानि अग्नि ऋषि से ऋक्, वायु ऋषि से यजुस् और सूर्य ऋषि से सामवेद का ज्ञान मिला। अंगिरस ऋषि को अथर्ववेद का ज्ञान मिला। इससे ब्रह्मा जैसे ऋषियोंने चारो वेदोंकी शिक्षाको स्वयं साक्षात्कार कर अन्य विद्वानों में फैलाया। श्रुतिपरंपरा में वेदग्रहणकालमें ब्रह्मा के चतुर्मुख होने का वर्णन आया है
13. ↑ वैशेषिक दर्शन, प्रथम अध्याय, प्रथम माह्नक, तृतीयश्लोक
14. ↑ ऋंगवेद संहिता प्रथम भाग में ख्याति प्राप्त प्रोफेसर मैक्स मूलर लिखते हैं (प्राक्कथन, पृष्ठ १०) कि वे इस बात से आश्वस्त हैं कि ये दुनिया की प्राचीनतम ग्रन्थ (पुस्तक) हैं।
15. ↑ Life And Letters Of Fredrick Maxmueller Vol. I, Chap. XV, Page 34
16. ↑ Ibid, Vol. I, Chap. XVI, Page 378
17. ↑ Origin And Spread Of Tamils By V. R. Ramachandra Dikshitar, P. 14
18. ↑ Original Sanskrit Texts By Mr. Muir Vol. II, Page 387
19. ↑ Original Sanskrit Texts Vol. II (Writer - Muir)
20. ↑ History Of India Vol. I (Writer - Elphinstion)
21. ↑ Hindustan Times, 31st October 1977
22. ↑ Mr. Vishnu Shridhar Vakankar's Thoughts, Times Of India, Ahmedabad, Published in 22/12/1985
23. ↑ From The Mohanjo-Daro And The Indian Civilization Edited By Sir John Marshall, Cambridge 1931
24. ↑ ऋग्वेद १।१६४।२०
25. ↑ पुस्तक मानवेर आदि जन्मभूमि लेखक श्रीविद्यारत्न जी, पृष्ठ १२४
26. ↑ पाठ्यपुस्तक प्राचीन भारत, पाठ वैदिक युग का जीवन, दिल्ली सन् १९८६
27. ↑ Indian Express 5/9/1977
28. ↑ दयान्नद सरस्वती. सत्यार्थ प्रकाश. पृ° 24-25.